Page No.:
Date:

UG study material for students of History

Subject : History

Class : UG Semester-IV

Paper : MJC-V

Topic : राजपूतों की उत्पत्ति : राजपूतकालीन सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन

By : Dr. Rajiv Nayan
Associate Professor,
Dept. of History,
Jagjiwan College, Ara.

Scanned by CamScanner

प्रश्न:- राजपूतों की उत्पत्ति सम्बन्धी विभिन्न मतों का वर्णन करते हुए इस काल के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन का वर्णन कीजिए।

उत्तर:- सातवीं शताब्दी से बारहवीं शताब्दी तक का इतिहास अनेक राजवंशों के उत्थान एवं पतन का काल रहा है जिनमें गुर्जर-प्रतीहार, चौहान, परमार, चालुक्य, चंदेल, गहड़वाल, गुहिल, तोमर आदि अधिकांश वंश राजपूत माने जाते हैं और इसी कारण इस काल को राजपूत काल कहा जाता है। हर्ष के बाद भारत की एकता पुनः शिथिल पड़ गई थी और विकेन्द्रीकरण की भावना बलवती होने के कारण देश में छोटे-छोटे राज्यों का उदय हुआ जिन्हें एकता के सूत्र में बाँधने वाली सत्ता का उस समय अभाव था। यह सही है कि राजपूतों ने सामंतवादी व्यवस्था पर आधारित एक विशाल साम्राज्य की स्थापना कर इस एकता को कड़ीबद्ध करने का प्रयास किया।

राजपूतों की उत्पत्ति का प्रश्न आज तक भारतीय इतिहास का एक विवादास्पद पहलू है। टॉड के अनुसार राजपूतों की उत्पत्ति मध्य एशिया की एक सिथियन जाति से हुई थी। स्मिथ और कुक का मानना है कि राजपूत विदेशी थे, जिन्हें अग्नि के द्वारा शुद्ध किया गया

Scanned by CamScanner

और कालांतर में प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए इन्होंने स्वयं को सूर्य एवं चंद्र का वंशज कहना शुरू किया। गौरीशंकर ओझा का विचार टॉड एवं वैद्य के विचारों का संकलन मात्र ही है। भोज के ग्वालियर-अभिलेख और बाऊक के जोधपुर-अभिलेख से पता चलता है कि राजपूत लोग प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा हेतु अपना संबंध राजा रामचन्द्र के वंश से जोड़ते थे। पृथ्वीराजरासो में राजपूतों के 36 कुलों का वर्णन है जो सूर्य, चंद्र (शशि) और यदु वंश से संबद्ध बताये गये हैं। राजपूतों की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न मत एवं मतांतर के कारण किसी एक निष्कर्ष पर पहुँचना दुष्कर है, लेकिन निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि इन्होंने भारतीय इतिहास में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, सैनिक एवं सांस्कृतिक कारणों से एक अच्छा स्थान बना लिया।

सामाजिक जीवन:-

राजपूतकालीन समाज वर्णाश्रम पर आधृत था। स्मृतिकार 4 जातियों का उल्लेख करता है जबकि कल्हण 64 उपजातियों का। परंपरा के अनुरूप भारतीय समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र वर्ण में विभक्त था। इस काल के सामाजिक व्यवस्थाकारों ने भी अनेक आचार-विचार तथा

Scanned by CamScanner

प्रतीकात्मक आधार पर प्रत्येक वर्ग में अंतर बनाये रखने की व्यवस्था की है। ब्राह्मणों की सत्ता पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित थी जिनका दान और श्रद्धा से आदर किया जाता था। स्कंद पुराण में कहा गया है कि ब्राह्मणों को दान देने से पितर (पूर्वज) पितृ तथा देवता दोनों प्रसन्न होते हैं। पुराण, स्मृति, सांख्य, न्याय, मीमांसा, वैशेषिक, रामायण, महाभारत, व्याकरण, ज्योतिष, गणित, वैद्यक आदि ग्रंथों का अध्ययन और प्रणयन ब्राह्मण लोग करते थे। क्षत्रिय वेद तो पढ़ते थे, किन्तु वे किसी दूसरे को वेद पढ़ा नहीं सकते थे। वैश्यों और शूद्रों के बारे में अपवचनी मिलता है, "इन्हें वेद सुनने का भी अधिकार नहीं है।" समाज के लिए यह एक दोषपूर्ण विसंगति थी और इसके चलते ही सामाजिक व्यवस्था की नींव धीरे-धीरे हिल गई। विभिन्न भारतीय पराजय के कारणों में से एक कारण यह भी रहा है कि एक ओर तो लोग विश्वबंधुत्व की भावना से अनुप्राणित होते थे और दूसरी तरफ अपने यहाँ ही इन्होंने निम्न वर्ग के लोगों के लिए विभेद की दीवारें खड़ी कर रखी थीं। इस कारण भारतीय दृष्टिकोण व्यापक नहीं रहा, बल्कि उसमें रूढ़िवादिता, अदूरदर्शिता एवं अनुदारता

Scanned by CamScanner

का समावेश हो गया।

शास्त्रों के अनुसार शासन करना, प्रजा की रक्षा करना तथा युद्ध में हिस्सा लेना क्षत्रिय वर्ग के विशिष्ट कर्म थे। राजपूतों में वंशगत रक्त-शुद्धता की भावना भरी हुई थी। हालाँकि राजनीतिक दृष्टिकोण से इस काल को राजपूत काल की संज्ञा दी जाती है किन्तु एक शक्तिशाली सैनिक वर्ग होने के कारण धर्म, समाज, काव्य-साहित्य, कला तथा स्थापत्य, आर्थिक व्यवस्था आदि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों पर इनका गहरा प्रभाव है।

गुप्त काल के अंतिम समय के अभिलेखों में करण (लिपिक) का उल्लेख हुआ है जो अनेक प्रकार के प्रशासकीय अधिकारी होते थे। नवीं शताब्दी तक ये कायस्थ जाति के रूप में संगठित हो चुके थे। ग्यारहवीं शताब्दी के बाद तो कायस्थों के उच्च प्रशासकीय पदों पर नियुक्त होने के अनेक उल्लेख प्राप्त होते हैं। दासप्रथा का उल्लेख भी इस काल में मिलता है।

मेधातिथि (मनु 13-14) ने ब्राह्मण का क्षत्रिय तथा वैश्य से अनुलोम विवाह अपवाद रूप में स्वीकार किया है। स्मृति-चंद्रिका तथा स्मृत्यर्थसार में असवर्णों से विवाह कलिवर्ज्य घोषित है। किन्तु स्वजातीय से विवाह के बाद द्विजातीय से विवाह की अनुमति दी है। स्वयंवर के उदाहरण

Scanned by CamScanner

भी मिलते हैं, कुछ विशेष परिस्थितियों में तथा अनेक बंधनों के साथ 'नियोग' शास्त्रीय व्यवस्था में मान्य था। सती तथा जौहर प्रथा, पुत्री की बाल हत्या, बहुपति विवाह और देवदासी तथा 'वेश्यावृत्ति' को बढ़ावा देनेवाली संस्थाओं ने स्त्रियों की दशा को कमजोर किया। उच्च वर्णों में स्त्रियों को शिक्षा दी जाती थी। उत्तराधिकार तथा संपत्ति के संबंध में इन्हें पहले से अधिक अधिकार प्राप्त थे। रानी दिद्दा, कालचेदि रत्नाबा, मैलादेवी, लक्ष्मीदेवी तथा कुछ प्रशासिकाओं का भी उल्लेख मिलता है।

आर्थिक अवस्था :-

जनकल्याण की ओर भी राज्य का ध्यान रहता था और जनता की समृद्धि के लिए राज्य की ओर से प्रयास होता था। इस काल की अर्थव्यवस्था में कृषि को ही प्रधानता प्राप्त थी। सिंचाई सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति के लिए रहट (पारसी चक्र प्रणाली) तथा जलाशयों की व्यवस्था थी। चंदेलों और परमारों ने महोबा में मदनसागर तथा धार में मुंजसागर जैसे कई तटबंध एवं झीलों का निर्माण करवाया। कश्मीर में अवंतिवर्मन के मंत्री सुय्य ने सिंचाई के लिए नहरें बनवाईं। परमार भोज और राजेन्द्र

Scanned by CamScanner

चोल ने बड़े-बड़े जलाशयों का निर्माण करवाया।

उद्योग-धंधे तथा व्यापार का आयोजन श्रेणियों द्वारा होता था। सूती कपड़ों के विशिष्ट उत्पादन क्षेत्र मानसोल्लास के अनुसार गुजरात, मुलतान, कलिंग, बंग, मालवा आदि थे। इब्न बैकल के अनुसार देवल (सिंध) तलवार-निर्माण के लिए सुप्रसिद्ध था। विदेशी व्यापार पश्चिमी तथा पूर्वी देशों से जलमार्ग तथा थलमार्ग से होता था। पश्चिमी भारत के मुख्य बंदरगाह थे- देवल, खंभात, थाना, सोपारा, कवीमों आदि। पूर्वी तट पर ताम्रपर्णी सर्वाधिक प्रसिद्ध बंदरगाह था। इब्न खोरदादबेह के अनुसार भारत से चंदन की लकड़ी, कपूर, सोंग, नारियल, कस्तूरी, अंगूर, नील, हाथीदाँत की कलाकृतियाँ, ऊनी कपड़े, रेशम इत्यादि निर्यात किये जाते थे। अभिधान रत्नमाला से ज्ञात होता है कि विदेशों से अच्छी नस्ल के घोड़े, शराब, बसरा से खजूर, चीन से रेशम, कम्बोडिया से अगरु की लकड़ी आदि वस्तुओं का आयात होता था।

इस प्रकार, तत्कालीन साहित्य, अभिलेख, विदेशी यात्रियों के विवरणों से ज्ञात होता है कि इस काल में भारत की आर्थिक स्थिति समुन्नत दशा में थी, किन्तु धन-संपदा मुख्यतः सेठ-साहुकारों के पास ही केन्द्रित थी। सामान्य जनता का जीवन श्रमसाध्य होते हुए भी साधारण रूप से सरल था।

Scanned by CamScanner

सांस्कृतिक जीवन -

साहित्य - इस काल के शासक न केवल साहित्यानुरागी और साहित्य के संरक्षक थे, वरन् स्वयं भी साहित्य-रचना में पटु थे। विग्रहपाल बीसलदेव चौहान ने हरिकेलिनाटक और वत्सराजदेव दानसागर और अद्भुतसागर की रचना की। राष्ट्रकूट अमोघवर्ष ने कविराजमार्ग, प्रश्नोत्तर मालिका तथा चालुक्य शासक सोमेश्वर तृतीय ने मानसोल्लास की रचना की।

संस्कृत काव्य - कविराज ने राघवपांडवीय, जिनसेन ने पार्श्वाभ्युदयकाव्य, श्रीहर्ष ने नैषधीयचरित, मंख ने श्रीकण्ठचरित, जयदेव ने गीतगोविन्द, धोयी ने पवनदूत, संध्याकरनंदी ने रामचरित, बिल्हण ने विक्रमांकदेवचरित, पद्मगुप्त ने नवसाहसांक-चरित, हेमचन्द्र ने द्वाश्रयकाव्य, सोमदेव ने कीर्तिकौमुदी, जयानक ने पृथ्वीराज विजय, क्षेमेन्द्र ने बृहत्कथामंजरी, राजशेखर ने काव्यमीमांसा और कल्हण ने राजतरंगिणी की रचना की।

भाषा के क्षेत्र में अपभ्रंश का विकास इसी युग में हुआ। प्रादेशिक भाषाओं के विकास की शुरुआत भी इसी युग में हुई। तमिल, तेलुगु और कन्नड़ भाषाओं की प्रगति हुई।

Scanned by CamScanner

नाटक के क्षेत्र में भवभूति ने मालतीमाधव, महावीरचरित, राजशेखर ने बालरामायण, कर्पूरमंजरी, दामोदर ने हनुमन्नाटक, श्रीकृष्ण मिश्र ने प्रबोध चंद्रोदय और सोमदेव ने ललितविग्रहराज की रचना की।

दर्शन के क्षेत्र में कुमारिल ने अभिधानरत्नमाला, मंडन ने विधिविवेक, वाचस्पति मिश्र ने न्यायकणिका और हेमचन्द्र ने प्रमाणमीमांसा लिखी।

कानून के क्षेत्र में मेधातिथि ने मनुस्मृति पर टीका, विज्ञानेश्वर ने मिताक्षरा, हेमाद्रि ने चतुर्वर्गचिंतामणि और हलायुध ने ब्राह्मणसर्वस्व लिखा।

राजनीति के क्षेत्र में सोमदेव ने नीतिवाक्यामृत, भोज ने युक्तिकल्पतरु, चंडेश्वर ने राजनीतिरत्नाकर और माधवकर ने रुग्विनिश्चय की रचना की।

विविध ग्रंथों में निम्नलिखित प्रमुख हैं— वाक्पतिराज का गौड़वहो, भोज का कूर्मशतक, भास्कराचार्य का लीलावती, सोमप्रभ का कालकाचार्य-कथा और प्रबंधचिंतामणि, धनपाल का पायलच्छी, पंप का पंपभारत इत्यादि।

कला — स्थापत्य कला —

भारतीय स्थापत्य कला में मंदिरों की तीन शैलियाँ विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। उत्तरी भारत में

Scanned by CamScanner

हिमालय से विंध्य तक नागर शैली प्रचलित रही। विंध्य से कृष्णा नदी तक एक मिश्रित प्रकार की बेसर शैली - वेसर शैली तथा कृष्णा नदी के दक्षिण में कन्याकुमारी तक द्राविड़ शैली का विकास हुआ।

उड़ीसा - उड़ीसा के मंदिर विशुद्ध नागर शैली का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें से भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर पूर्ण विकसित आर्य नागर शैली का सर्वोत्तम उदाहरण है। इसकी मुख्य विशेषता है - गर्भगृह से जुड़ा जगमोहन और उससे सामने नृत्य मंडप और भोग मंडप और आकर्षक शिखर। कोणार्क के सूर्यमंदिर में युगल नायुन-मुद्रा के चित्रों की भरमार है।

खजुराहो - खजुराहो के मंदिर चंदेल राजाओं के समय 950 - 1050 ई० के बीच बनाये गये। वास्तुकला की मुख्य विशेषता उत्तुंग शिखर, दीवारों के मध्य भाग का अलंकरण, गर्भगृह, मंडप इत्यादि। इनमें कन्दरिया महादेव का मंदिर सर्वोत्तम है जो अपने चबूतरे से 44 फुट ऊँचा है।

कश्मीर, राजस्थान - कश्मीर में एक अलग

Scanned by CamScanner

प्रकार की वास्तुकला विकसित हुई। ललितादित्य ने वहाँ पर मार्तंड मंदिर का निर्माण करवाया।

जैन स्थापत्य के सर्वोत्कृष्ट नमूने माउंट आबू (दिलवाड़ा) और पालिताना (शत्रुंजय) के मंदिर हैं।

द्रविड़ शैली के सर्वोत्तम नमूने हैं- दक्षिण में वेलूर के मंदिर और हलेविड का होयसलेश्वर मंदिर। राष्ट्रकूटों द्वारा निर्मित एलोरा का मंदिर भारतीय स्थापत्य का सर्वाधिक भव्य नमूना है। एरण एक प्रसिद्ध कला केन्द्र था जहाँ वराह, नरसिंह और विष्णु के मंदिर हैं।

गुजरात - इस कला-शैली के उदाहरण हैं- पाटन, बड़ौदा और मोढेर का सूर्य मंदिर, सोमनाथ का मंदिर इत्यादि।

मूर्तिकला, संगीत, चित्रकला और नृत्यकला के पूर्ण रूप से विकसित और प्रचलित होने का प्रमाण भी इस युग में मिलता है।

Scanned by CamScanner